ISSN: 2456–5474 RNI No.UPBIL/2016/68367 Vol.-6* Issue-9* October- 2021
Innovation The Research Concept

'कानून व्यवस्था' और 'लोक व्यवस्था' का अर्थ, परस्पर संबंध, क्रियान्वयन तथा विभिन्न दृष्टिकोण

Meaning, Interrelationship, Implementation and Different Approaches of 'Law and Order' and 'Public Order'

Paper Submission: 10/10/2021, Date of Acceptance: 23/10/2021, Date of Publication: 24/10//2021

नितेश भार्गव
शोधार्थी,
राजनीतिक विज्ञान विभाग,
विक्रम विश्वविद्यालय,
उज्जैन, म.प्र., भारत

सारांश / Abstract

'कानून व्यवस्था' और 'लोक व्यवस्था' प्रशासनिक और न्यायालयीन कार्यप्रणाली में बहुधा प्रयुक्त अवधारणाएँ हैं। तथापि आम बोलचाल, मीडिया यहाँ तक कि प्रशासनिक एजेंसियों द्वारा इन शब्दों को समानार्थी ढंग से प्रयुक्त किया जाता है। कई बार एक शब्द के स्थान पर दूसरे शब्द के प्रयोग से असमंजस और भ्रम की स्थिति भी निर्मित होती है। प्रस्तुत शोध आलेख में उक्त प्रयुक्त विधिक शब्दों के अर्थ, उनके स्वरूप, उनके अंतर तथा इस संबंध में विभिन्न अभिमत और दृष्टिकोण को विश्लेषित किया गया है। कानून व्यवस्था का दायरा प्रभाव में काफी सीमित और विशिष्ट होता है जबकि लोक व्यवस्था का दायरा व्यापक तथा इन दोनों से अधिक प्रभाव और व्यापक क्षेत्र राज्य की सुरक्षा का होता है। राज्य की सुरक्षा के दायरे में ही लोक व्यवस्था और कानून व्यवस्था संचालित होते हैं। कोई घटना कानून व्यवस्था का मामला है या लोक व्यवस्था का यह उसके प्रभाव और गंभीरता से निर्धारित होता है। वस्तुतः तीनों ही अपने अपने स्वरूप में विभिन्न विधियों से संचालित होते हैं।

'Law and Order' and 'Public Order' are concepts frequently used in administrative and judicial practice. However, in common parlance, the media and even by administrative agencies these words are used synonymously. Sometimes the use of another word in place of one word creates confusion and confusion. In the present research article, the meaning of the above used legal terms, their nature, their differences and various opinions and perspectives have been analyzed in this regard. The scope of law and order is very limited and specific in effect, whereas the scope of public order is wider and greater than these two and the wider area is of the security of the state. Public order and law and order operate within the purview of the security of the state. Whether an event is a matter of law and order or public order is determined by its impact and severity. In fact, all three operate in different ways in their own form.

मुख्यशब्दः कानून व्यवस्था (लॉ एंड आर्डर), लोक व्यवस्था (पब्लिक आर्डर), सार्वजनिक व्यवस्था (सोशल आर्डर) राज्य की सुरक्षा (सिक्योरिटी ऑफ स्टेट), अपराध प्रशासन (क्रिमिनल एडमिनिस्ट्रेशन), कानून का शासन (रूल ऑफ लॉ)

Keywords: Law and Order, Public Order, Public Order (Social Order), Security of the State (Security of State), Crime Administration (Criminal Administration), Rule of Law (Rule of Law)

प्रस्तावना

व्यवस्था शब्द का अर्थ वस्तुओं और व्यक्तियों के अपने निर्धारित स्थान पर होने से है। कैम्ब्रिज डिक्शनरी के अनुसार व्यवस्था शब्द का अर्थ, "व्यक्तियों या वस्तुओं को व्यवस्थित किए जाने का ढंग, यह एक दूसरे के संबंध में हो सकता है या किसी विशिष्ट गुणधर्म के अनुरूप।"[1] कानून किसी संप्रभु राज्य द्वारा निर्मित विधि है जो बाध्यकारी होती है और उल्लंघन पर अभियोजन किया जा सकता है। कैम्ब्रिज डिक्शनरी के अनुसार कानून शब्द का अर्थ, "नियम जो सामान्यतः सरकार द्वारा बनाए जाते हैं और जो समाज के व्यवहार करने के तरीके को व्यवस्थित करने में प्रयुक्त होते हैं।"[2] व्यवस्था वस्तुतः कानून की स्वीकृति को व्यापक बनाती जाती है और इसके लिए अनुकूल परिस्थिति तैयार करती है, जो आगे चलकर कानून के शासन की अवधारणा को लोक स्वीकृति प्रदान करती है। व्यवस्था का कानून सम्मत होना आवश्यक है। कानून का शासन किसी भी लोकतांत्रिक प्रणाली के पवित्रतम उद्देश्यों में से एक

है। "कानून का शासन वह है जिसमें कानून और प्रक्रियाएँ समान रूप से सभी नागरिकों पर लागू होते हैं।"[3] किसी भी कानून की सर्वोच्च सफलता उसके सहज स्वीकृत अनुपालन में मानी गयी है। यह परिपक्व और सहभागी लोकतंत्र की अनिवार्यता भी है और विकास व समृद्धि की पूर्वस्थिति भी। 'व्यवस्था' जहाँ कानून की स्वीकृति का आधार बनाती है वहीं 'कानून' व्यवस्था को बनाने प्राधिकार देता है, इसीलिए 'कानून' सम्मत 'व्यवस्था' सर्वोत्तम मानी गयी है। 'कानून' व्यवस्था को बनाए रखने का पूर्वाधार है और कोई भी कानून बिना व्यवस्था के संभव नहीं।[4] कानून और व्यवस्था परस्पर एक दूसरे की पूर्वशर्त हैं और दोनों का संतुलित साहचर्य किसी भी राष्ट्र, किसी भी प्रकार की राजनीतिक प्रणाली के विकास, उन्नति और अस्तित्व के लिए अनिवार्य है। यही कारण है कि लोक व्यवस्था को संविधान की सातवीं अनुसूची की सूची 2- राज्य सूची में प्रथम स्थान पर ही रखा गया है।[5] 'कानून व्यवस्था' अपने चरम रूप में न्यूनतम कानून और अधिकतम व्यवस्था के रूप में लक्षित की जाती है। कानून व्यवस्था के विकास की यात्रा 'अधिकतम और कठोर कानून तथा न्यूनतम व्यवस्था' से 'न्यूनतम और उदार कानून तथा अधिकतम व्यवस्था' की ओर जाती है। दार्शनिक ढंग से कहें तो अपने अंतिम स्वरूप में केवल व्यवस्था ही शेष रहती है कानून बहुत न्यूनतम बचता है। न्यूनतम सरकार अधिकतम शासन की अवधारणा इसी की पृथक व्याख्या है। कानून व्यवस्था का सर्वोत्तम न्यूनतम कानून द्वारा व्यवस्था में है। हेनरी डेविड थोरो ने 1849 में 'सिविल डिसओबीडिएन्स' में न्यूनतम सरकार को सर्वोत्तम सरकार बताया है।[6] यह बिना कानून के नागरिकों के आपसी सामंजस्य मात्र से ही संचालित व्यवस्था होगी तथापि यह मनमानेपन की व्यवस्था नहीं हो सकती। यद्यपि वर्तमान परिस्थितियों में यह एक काल्पनिक और आदर्श अवधारणा मात्र लगती है। तथापि लोककल्याणकारी राज्य का यही चरम आदर्श है कि 'लोक व्यवस्था' लोकतंत्र की परिपक्वता से निसृत हो किसी दमनकारी कानून से नहीं। यह चरम विकेंद्रीकरण भी है तथा नागरिकों के चरम जागरूक होने को भी साथ साथ व्यक्त करता है। भारत के केंद्रीय गृह मंत्रालय ने 'लॉ एंड आर्डर' एवं 'पब्लिक आर्डर' के संबंध में यह स्थिति बताई है- 'पुलिस' और 'लोक व्यवस्था' भारत के संविधान की सातवीं अनुसूची के तहत राज्य के विषय हैं और इसलिए, राज्य सरकारों अपराधों की रोकथाम, पतारसी, पंजीकरण करना, अन्वेषण करना और अपराधियों पर मुकदमा चलाना राज्य का प्राथमिक दायित्व है। यद्यपि, केंद्र सरकार राज्य पुलिस बलों को हथियार, संचार, उपकरण, गतिशीलता, प्रशिक्षण और अन्य बुनियादी ढांचे के मामले में आधुनिकीकरण के लिए वित्तीय सहायता प्रदान करती है। इसके अतिरिक्त, अपराध और कानून व्यवस्था से संबंधित घटनाओं को रोकने के लिए केंद्रीय सुरक्षा और खुफिया एजेंसियों द्वारा राज्य की कानून प्रवर्तन एजेंसियों के साथ खुफिया जानकारी नियमित रूप से साझा की जाती है।

वस्तुतः कानून और व्यवस्था को नियमों के एक समूह के रूप में परिभाषित कर सकते हैं, जो जनसामान्य की इच्छा का प्रतिनिधित्व करते हैं और जो समाज में शांति के लिए आवश्यक हैं और इस प्रकार एक वैध संस्था द्वारा तैयार और अपनाया गया है और सामान्य क्रम में जिसका सभी या अधिकांश नागरिकों द्वारा पालन किया जाता है।

अध्ययन का उद्देश्य

उक्त शोध अध्ययन का उद्देश्य कानून व्यवस्था और लोक व्यवस्था के विधिक और व्यावहारिक अर्थ को स्पष्ट करना है ताकि किसी भी एजेंसी द्वारा इसका दुरुपयोग नहीं किया जा सके। बहुधा लोक व्यवस्था के नाम पर कानून व्यवस्था के मामलों को अतिगंभीर बता कर निवारक निरोध विधियों का प्रयोग अतिचार को बढ़ावा देता है जो लंबे अंतराल में विधि के शासन की अवधारणा को स्थापित होने से रोकता है। यह समस्या ही इस शोध का मूल प्रश्न है। इस प्रकार दोनों अवधारणाओं को विभिन्न दृष्टिकोण और न्यायालयीन निर्णयों के प्रकाश में स्पष्ट किया जाना अत्यंत प्रासंगिक है अतः रुचिकर भी है।

भूमिकाओं का द्वंद्व

1861 के पुलिस अधिनियम के अंतर्गत जिला मजिस्ट्रेट को जिले में 'कानून व्यवस्था' प्रशासन का प्रमुख बनाया गया था। भारतीय संविधान नीति निदेशक तत्वों के अनुच्छेद 50 में कार्यपालिका से न्यायपालिका के पृथक्करण का प्रावधान करता है।[7] इसी क्रम में 1963 में जिला मजिस्ट्रेट को न्यायिक कार्यों से पृथक किया गया बाद में 1974 में दंड प्रक्रिया के संशोधन में जिला मजिस्ट्रेट को शेष न्यायिक कार्यों से भी पृथक किया गया यद्यपि अब भी निरोधक मामलों का विचारण उसी के पास बना रहा और पुलिस एक्ट में तय भूमिका अनुसार जिले में कानून व्यवस्था प्रशासन का उत्तरदायित्व उसी का है। वह 'कानून व्यवस्था' के प्रबंधन में एक महत्वपूर्ण एजेंसी है। जिला मजिस्ट्रेट के पास आम जनता के हित के तमाम कार्यों की जिम्मेदारी होने से इसे पुलिस और आमजन के मध्य एक कुशन की भूमिका के रूप में नियमित

बनाये रखा गया है। यद्यपि जिला मजिस्ट्रेट की इस भूमिका को लेकर अलग अलग मत व्यक्त किए जाते रहे हैं। तथापि वह शांति व्यवस्था (107 और अन्य दंड प्रक्रिया संहिता) तथा लोक व्यवस्था व परिशांति (129, अन्य एवं 144 दंड प्रक्रिया संहिता) बनाए रखने के लिए अधिकृत किया गया है।[8]

जिला मजिस्ट्रेट को वरीयता दिए जाने के पीछे जो कारण रहे उसे 1871 में भारत सरकार के तत्कालीन कानून मंत्री रहे जेम्स फिट्ज जेम्स स्टीफेन ने इस प्रकार कहा था, इस प्रसंग में जो पहला सिद्धांत मस्तिष्क में आता है वह यह कि भारत में ब्रिटिश राज को बनाए रखने के लिए जिले के अधिकारियों की इस स्थिति को बनाए रखना नितांत आवश्यक है।

संविधान के अनुच्छेद 50 के अनुपालन में जब 1963 में कार्यपालिक मजिस्ट्रेट से न्यालायीन शक्तियाँ पूर्णतः ले ली गयी तब भी कानून व्यवस्था से प्रत्यक्षतः संबंधित मामलों के अधिकार कार्यपालिक मजिस्ट्रेटों के पास ही रहे। यही कारण है कि कार्य विभाजन के बाद भी दंड प्रक्रिया संहिता की बहुत सी धाराओं में ट्रायल कार्यपालिक मजिस्ट्रेट द्वारा ही किया जाता है।

इस भूमिका को स्पष्ट करने के संबंध में सर्वोच्च न्यायालय और अन्य उच्च न्यायालयों ने समय समय पर कानून व्यवस्था और लोक व्यवस्था बनाए रखने की निर्धारक भूमिकाएँ तय करने संबंधी अभिमत और मार्गदर्शी बिंदु सुझाये हैं।

हाल ही के एक अभिमत में सर्वोच्च न्यायालय ने कहा कि, असाधारण परिस्थितियों में जिला मजिस्ट्रेट की भूमिका महत्वपूर्ण होती है- उदाहरण के लिए, गार्गी कॉलेज में किसी विशेष स्थान पर शांति भंग को रोकने के लिए; और शाहीन बाग की तरह शिकायत निवारण के लिए भी। यदि किसी अधिकारी को कानून और व्यवस्था बनाए रखने और सार्वजनिक व्यवस्था बनाए रखने दोनों के लिए दोहरी भूमिका आवंटित की जाती है, तो इससे एक लक्ष्य दूसरे के पक्ष में विस्थापित हो सकता है, जैसा कि जामिया मिलिया इस्लामिया में देखा गया था।

इसीलिए सर्वोच्च न्यायालय ने जिला मजिस्ट्रेट की भूमिका को पुलिस से पृथक मूल्यांकित किए जाने के महत्व को भी विशेष रूप से रेखांकित किया है। कानून व्यवस्था और लोक व्यवस्था के दायरे स्पष्ट और सुनियोजित हों इसी क्रम में राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र के अल्दानिश रीन बनाम दिल्ली राज्य में, उच्च न्यायालय ने दिल्ली पुलिस द्वारा मजिस्ट्रेट शक्तियों के प्रयोग की समय-समय पर समीक्षा करने के लिए एक निगरानी तंत्र स्थापित करने का निर्देश दिया।[9] सुप्रीम कोर्ट, एक जनहित याचिका में, इस बात की जांच कर रहा है कि क्या पुलिस अधिकारी कुछ मामलों में मजिस्ट्रेट के रूप में कार्य कर सकते हैं।

शिकायत निवारण के माध्यम से रोकथाम और न्यूनतम कुंद उपायों पर निर्भरता वैधता के लिए महत्वपूर्ण है। राष्ट्रीय पुलिस आयोग भी जिला मजिस्ट्रेट की समन्वयक भूमिका को मान्यता देता है, जिसके पास पुलिस से अधिक गुंजाइश होती है। केरल में सार्वजनिक व्यवस्था के लिए जिम्मेदार एक जिला मजिस्ट्रेट और अपराध पर ध्यान केंद्रित करने वाले शहर के पुलिस आयुक्त के रूप में एक वरिष्ठ पुलिस अधिकारी दोनों हैं।[10]

लोक व्यवस्था बनाए रखने के लिए भूमिकाओं की न्यायिक समीक्षा और निर्णयों की आनुपातिकता, यह जांचने के लिए कि क्या वे न्यूनतम दखल देने वाले उपाय हैं, यदि पुलिस को ऐसे कर्तव्यों को सौंपने की आवश्यकता है तो नीति पर पुनर्विचार की आवश्यकता है। यद्यपि, संविधान की सातवीं अनुसूची 'पुलिस' और 'लोक व्यवस्था' के बीच अंतर करती है।

कानून व्यवस्था बनाम लोक व्यवस्था

इस संबंध में आंध्र प्रदेश और तेलंगाना उच्च न्यायालय ने चिराबोनिया कृष्णा यादव के तेलंगना प्रिवेंशन ऑफ डेंजरस एक्टिविटी ऑफ बूटलेगर्स, डेकोइट्स, ड्रग ऑफेण्डर, गुण्डा, इम्मोराल ट्रेफिक ऑफेंडर एंड लैंड गरेबर्स एक्ट 1986 में निरोध पर सुनवाई करते हुए निरोध आदेश को निरस्त किया। राज्य का तर्क था कि अभियोक्ता ने 1989 से 2012 के बीच 26 अपराध किए। अपनी दलील में राज्य ने एक परिवार की अपराधिक शिकायत पर उनकी सुरक्षा और लोक व्यवस्था बनाए रखने के लिए अभियोक्ता के निरोध को अनिवार्य बताया। इस पर न्यायालय की डबल बेंच ने सर्वोच्च न्यायालय और विभिन्न उच्च न्यायालयों के को उधृत करते हुए कानून व्यवस्था और लोक व्यवस्था के अंतर को रेखांकित किया। न्यायालय ने कहा कि अभियोक्ता के विरुद्ध केवल एक परिवार की शिकायत है न कि व्यापक जनसमूह की, अतः यह प्रकरण कानून व्यवस्था की गड़बड़ी का है न कि लोक व्यवस्था की गड़बड़ी का। "जब सामान्य आपराधिक विधियाँ किसी व्यक्ति की गतिविधियों को नियंत्रित करने में सक्षम न हों, जो लोक व्यवस्था भंग का कारण हो, तब ही आत्यंतिक निरोधक उपाय अपनाए जाने

चाहिए। न्यायालय ने यह भी कहा कि कानून प्रवर्तन, अन्वेषण और अभियोजन एजेंसियों को आपराधिक न्याय प्रणाली की कमियों को दूर करने का प्रयास करना चाहिए।"[11]

सर्वोच्च न्याय ने 'कानून व्यवस्था' और 'लोक व्यवस्था' में स्पष्ट अंतर बताया है। 'कानून व्यवस्था' व्यक्तिगत अपराध से संबंधित होता है जबकि 'लोक व्यवस्था' व्यापक समुदाय के विरुद्ध होता है। दोनों ही अवधारणाओं के उद्देश्य और मापदंड अलग अलग हैं। 'कानून व्यवस्था' किसी क्षेत्र विशेष में उत्पन्न हुई स्थिति से सख्त कार्यवाही द्वारा निपटने और आपराधिक विधियों में उल्लेखित दाण्डिक कार्यवाही से संबंधित है। जबकि 'लोक व्यवस्था' जिला मजिस्ट्रेट को प्रत्यायोजित की गई ड्यूटी है जिसमें उसे यह आकलन करना होता है कि क्या कानून व्यवस्था के उल्लंघन की स्थिति को निराकृत करने हेतु जाया जाए या नहीं ताकि हिंसा और तनाव और अधिक न फैले। पिछले वर्ष उत्तर-पूर्वी दिल्ली में हुए दंगों और तब्लीगी जमात के मुख्यालय को खाली कराने के बाद जिलाधिकारी की जगह राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकार ने ऐसा ही किया।

बम्बई उच्च न्यायालय ने पुणे सिटी पुलिस कमिश्नर के 20 नवंबर 2020 के उस आदेश को निरस्त कर दिया जिसमें एक सामाजिक कार्यकर्ता को महाराष्ट्र प्रिवेंशन ऑफ डेंजरस एक्टिविटीज (MPDA) एक्ट के अंतर्गत निरोध में लिया था। न्यायालय ने कहा कि, "कानून व्यवस्था के मामलों के निराकरण में निरोधक विधियों के प्रयोग के सरलीकृत रास्ते को अपनाए जाने को विकल्प नहीं बनाया जा सकता।"[12]

सर्वोच्च न्यायालय ने कानून व्यवस्था और लोक व्यवस्था की भिन्न स्थितियों के मामलों के लिए कुछ मार्गदर्शक बिंदु और नियम बताए हैं-

प्रथम, किए गए कार्य की गंभीरता और समाज तक उसकी पहुँच को ध्यान में रखना चाहिए। तोड़फोड़ पर उतारू कुछ असंतुष्ट और उत्तेजित लोग 'लोक व्यवस्था' को तभी प्रभावित करते हैं जब वे एक विशेष समुदाय को समग्र रूप से प्रभावित करते हों। राम मनोहर लोहिया बनाम बिहार राज्य, 1965 के मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने बताया कि 'लोक व्यवस्था' के मामले में समुदाय या जनता का किसी कृत्य से व्यापक रूप से प्रभावित होना जरूरी है, जो कानून व्यवस्था की तुलना में समुदाय को ज्यादा प्रभावित करती है जबकि कानून व्यवस्था कुछ व्यक्तियों को ही प्रभावित करती है।

द्वितीय, मधु लिमये के मामले में सर्वोच्च न्यायालय की बैंच ने दोहराया कि, आपातकाल अचानक होना चाहिए और प्रतिबंध लगाने के लिए परिणाम पर्याप्त रूप से गंभीर होना चाहिए। एक बड़े क्षेत्र पर या लंबी अवधि के लिए प्रतिबंध लगाए जाने के विस्तार के लिए अपेक्षाकृत अधिक औचित्य और संतुलित प्रतिक्रिया की आवश्यकता होती है।

तृतीय, अनुराधा भसीन बनाम भारत संघ के मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने कहा कि, निरोधक आदेश कभी भी अभिमत की, कमियों की या लोकतांत्रिक अधिकारों के उपयोग की वैध अभिव्यक्ति को नहीं रोक सकते। विशिष्ट प्रतिबंधों को लक्ष्य, प्रकृति और आपातकाल की अवस्थाओं के अनुरूप बनाया जाना चाहिए, जिसमें कम से कम प्रतिबंधात्मक उपाय अपनाने की आवश्यकता हो।

निष्कर्ष

सर्वोच्च न्यायालय ने कानून व्यवस्था, लोक व्यवस्था और राज्य की सुरक्षा की बहुत स्पष्ट और मार्गदर्शी व्याख्या की है। सर्वोच्च न्यायालय ने इस संबंध में अपने विचार रखते हुए कहा कि- कानून व्यवस्था और लोक व्यवस्था की अवधारणाओं में अंतर को लेकर समय समय पर इस न्यायालय ने विभिन्न मामलों में अपना मत रखा है। डॉ. राम मनोहर लोहिया बनाम बिहार राज्य, 1966 (1) SCR 709, में न्यायमूर्ति हिदायतुल्लाह ने कहा कि कानून का कोई भी उल्लंघन व्यवस्था को प्रभावित करता है किंतु यह समुदाय को व्यापक रूप से प्रभावित करे तभी यह 'लोक व्यवस्था' को प्रभावित करने वाला कहा जा सकता है। उन्होंने तीन अवधारणाएं बताई हैं, कानून व्यवस्था, लोक व्यवस्था और राज्य की सुरक्षा तथा कहा कि इनमें से प्रत्येक के प्रभाव और सीमा को समझने के लिए तीन समकेन्द्रीय वृत्तों की परिकल्पना करनी होगी। सबसे बड़ा वृत्त कानून व्यवस्था होगा, अगला लोक व्यवस्था और सबसे छोटा राज्य की सुरक्षा का वृत्त होगा। कोई कृत्य कानून व्यवस्था को प्रभावित कर सकता है लेकिन लोक व्यवस्था को न करे, इसी प्रकार कोई कृत्य लोक व्यवस्था को प्रभावित करे लेकिन राज्य की सुरक्षा को न करे।[13]

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि किसी भी मामले का कानून व्यवस्था या लोक व्यवस्था से सम्बद्ध होने का निर्णय मामले के परिणाम और उसके सामाजिक प्रभाव और गंभीरता से निर्धारित होता है। कोई भी मामला अपने आप में अकेला निर्धारक नहीं हो सकता। किसी

व्यक्ति ने केवल कानून और व्यवस्था का उल्लंघन किया है या लोक व्यवस्था में गड़बड़ी का काम किया है, यह उस समाज पर उस कार्य की पहुंच की डिग्री और सीमा का सवाल है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. *https://dictionary.cambridge.org/dictionary/english/order*
2. *https://dictionary.cambridge.org/dictionary/english/law*
3. *Nwogu, G.A.I., Democracy: Its Meaning and Dissenting Opinions of the Political Class in Nigeria: A Philosophical Approach, Journal of Education and Practice ISSN 2222-1735 (Paper) ISSN 2222-288X (online) Vol.6, No.4, 2015*
4. *Bansal J. P., Administration of Law and Order, 1975, pp- 78*
5. *भारत का संविधान (9 दिसंबर, 2020 को यथाविद्यमान) पृष्ठ 350*
6. *Thoreau Henry David, Resistance to civil Government, New York GP Puntam, 1949, pp 189*
7. *भारत का संविधान (9 दिसंबर, 2020 को यथाविद्यमान) पृष्ठ 24*
8. *परांजपे डॉ ना. वि., दंड प्रक्रिया संहिता, सेंट्रल लॉ एजेंसी, 2019, पृष्ठ 176, 190*
9. *Aldanish Rein vs State Of Nct Of Delhi & Anr. on 1 November, 2018*
10. *https://www.thehindu.com/opinion/lead/a-demarcation-in-the-interest-of-public-order/article32726505.ece*
11. *[सी. नीला बनाम तेलंगाना राज्य, 2017 SCC OnLine Hyd 224, decided on 27.06.2017]*
12. *https://www.indiatoday.in/law/story/bombay-hc-pune-social-worker-detention-order-1819019-2021-06-24*
13. *कनु बिस्वास बनाम पश्चिम बंगाल राज्यAIR 1972 SC 1656*